PUNE RESEARCH SCHOLAR ISSN 2455-314X
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY JOURNAL VOL 4, ISSUE 4

: आदिवासियों में मौसमी स्थानांतरण की समस्या :

डॉ. बी. एल. पवार
आसि. प्रोफेसर (समाजशास्त्र)
विजयनगर आर्ट्स कॉलेज,
विजयनगर, जि.साबरकांठा
गुजरात भारत

(१) प्रस्तावना :

संसार में जहाँ पर भी मनुष्य स्थित हैं, वहाँ कोई न कोई मानवीय समस्याओं का घटनाचक्र अनवरत चलता आ रहा हैं । कालानुक्रम प्रत्येक समाज कोई न कोई समस्याओं का शिकार होता रहता है, जैसे कुदरती आपत्तियों का, कहीं विषम भौगोलिक परिस्थितियों का, मानव सर्जित कुछ प्रावधानों का, या अपने हालातों का । सर्वग्राही दृष्टि से देखा जाये तो समस्याएँ कोई नई -पुरानी, आयात-निकास या अपने-आप निर्मित नहीं होती । जिन समस्याओं के मूल में कहीं व्यकित या समाज खुद जिम्मेदार होता हैं, तो कहीं पर वास्तविक स्थानीय भौगोलिक परिस्थितियाँ भी जिम्मेदार होती हैं । अलग अलग समाजों में विभिन्न समस्याओं के स्वरूप और कारण अलग अलग होते हैं ।

अभ्यास में समाविष्ट और खास तौर पर डांग जिल्ले के आदिम समाजों की संरचना और जीवनचर्या अन्य समाजों की तुलना में ज़्यादातर पिछड़ी हुई, अभावग्रस्त, रुग्ण और दुर्भाग्यपूर्ण दिखाई देती है । सरकार ने भी इन जिल्ले को पिछड़े हुये जिल्ले के रूप में घोषित किया है । हकीकत में यहाँ की प्रादेशिक भौगोलिक विषमता और स्थानीय लोगों की लाचार स्थितियाँ ही इनके जीवन इतिहास का परिचय देती हैं । यहाँ के आदिवासी समाज-जीवन में शायद सभी प्रकार की समस्याएँ मौजूद हैं । पिछले कुछ दशकों से बढ़ती हुई आबादी, स्थानीय बेरोजगारी के कारण मौसमी स्थानांतरण प्रवृत्ति अधिक मात्रा में देखी जाती हैं । इसके प्रमुख कारणों की विस्तृत जानकारी निम्नांकित है ।

सामान्य अर्थ में स्थानांतरण वह प्रक्रिया है, “जिसमें बेरोजगारी और भूख से बेहाल लोग परिवार के साथ रोजगारी की तलाश में अपना घर-गाँव छोड़कर कभी दूसरे गाँव या तहसील या जिल्ले के बाहर किसी स्थल पर जाकर ठहरते हैं । उनका यह मुकाम कभी मौसमी (हंगामी) होता है या फिर कायमी । इस प्रवृत्ति को स्थानांतरण कहते हैं”।

(२) अध्ययन की शोध प्रविधियाँ :

प्रस्तुत अध्ययन में वैज्ञानिक प्रविधियों के आधार स्वरूप सर्वेक्षण, निर्देशक, अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची और तथ्यों के प्राथमिक और गौण स्त्रोतों के साथ लायब्रेरी का उपयोग किया गया हैं ।

(३) अध्ययन का उद्देश्य :

इस शोध अभ्यास का प्रमुख उद्देश्य जनजातिय लोगों में हो रही मौसमी स्थानांतरण की समस्या का समाजशास्त्रीय अध्ययन है । इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर शोध के लिए चुने गये गाँवों के लोगो की सामाजिक, आर्थिक स्थिति, भौगोलिक परिवेश में स्थानांतरण के प्रमुख कारणों का पता लगाना हैं । इसी क्रम में इन आदिवासियों की सामाजिक संरचना में क्या चढ़ाव-उतार आया है इसका विश्लेषण किया गया हैं । इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य यही है ।

(४) निदर्शन का अभ्यास-क्षेत्र :

प्रस्तुत अध्ययन प्रमुख रूप से डांग जिल्ले के दस गाँव क्रमश: उगा, दहेर, घाना, जारसोल, कसाड़बारी, कड़माल, ढोंगीयाआंबा, किरली, सेपूआंबा, घुबड़िया गाँवों का सर्वेक्षण किया गया है । निदर्श में चुने गये गांवों में ज़्यादातर भील और वारली जाति के हैं, और इन जातियों में मौसमी स्थानांतरण की प्रक्रिया बड़े पैमाने पर दिखाई दे रही हैं । सन २०११ की जनगणना के अनुसार जिल्ले में समाविष्ट ३११ गांवों की जनआबादी २२८२९१ है । इसमें ८९.१६ प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण और अधिकांशत: आदिवासी जनसंख्या हैं ।

(५) स्थानांतरण के प्रमुख कारण :

जहाँ तक स्थानांतरण का प्रश्न हैं और किसी व्यकित को अपना घर-गाँव छोड़कर पराये क्षेत्र में जाने की नौबत आती है तो इसके पीछे अनेक कारण जिम्मेदार होते हैं । शहरों से गाँवों की

परिस्थितियाँ अलग होती हैं । ज़्यादातर हम आर्थिक कारण को ही जवाबदेह मानते हैं । इस प्रमुख कारण के साथ गाँवो की स्थानीय परिस्थिति से जन्मे कुछ नए कारणों की चर्चा निम्नांकित हैं ।

(१) आर्थिक कारण :

मनुष्य को समाज जीवन में और समाज व्यवस्था में अपना सामाजिक स्थान नियत करने में यह कारण अति आवश्यक माना गया है । सामाजिक संरचना के अन्य पहलुओं को प्रभावित करने और उनमें परिवर्तन लाने में आर्थिक कारण प्रमुख हैं । संसार के प्रत्येक मनुष्य और पशु-पक्षियों तक को जीवन- निर्वाह के लिए संघर्ष करना पड़ता है । मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पैसे-रुपये कमाने पड़ते है । बुद्धिजीवी होने के कारण वह सुव्यवस्थित जीवन के लिए और भावि कल्पनाओं को साकार करने के लिए वह सदैव तत्पर और संघर्षरत रहता है । प्रत्येक मानव की त्रि-विध आवश्यकताओं रोटी, कपड़ा और मकान की पूर्तता हेतु किए जानेवाले प्रयत्नों से विश्व की अर्थव्यवस्था का उद्भव हुआ है ।

यहाँ के आदिवासियों का प्रमुख व्यवसाय खेती और पूरक व्यवसाय पशुपालन है । खेती प्राय: बरसात पर आधारित होती हैं । सिंचाई के अभाव के कारण यहाँ का किसान प्रारब्धवादी हैं । बरसात अच्छी होती हैं तो फसल अच्छी होती हैं । कृषि परंपरागत रूप से की जाने के कारण किसानों को पेट भरने से ज्यादा कोई फायदा नहीं होता । अत: उनकी आर्थिक स्थिति काफी बदतर है । पिछले कुछ दशकों से बढ़ती हुई आबादी के कारण जमीनें टुकड़ों में बंटी जा रही है, दूसरी और आबादी की तुलना में ज़मीनें खास फसल नहीं दे पाती । इसलिए विवशता के कारण उन्हे जीवननिर्वाह के लिए पूरक व्यवसाय या मजदूरी करनी पड़ती है ताकि वह अपने परिवार का कुछ हद तक पालनपोषण कर सके । कई परिवारों के पास उर्वरक ज़मीनें है, पर आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण वे अच्छे बीज और खाद नहीं डाल सकते । साथ ही वह नये जमाने के नये उपकरणों का उपयोग करने में असमर्थ हैं । मानवश्रम और पशुश्रम की शकित से संचालित परंपरा से चली आई हल और बैल -भैशा से जुड़ी प्रचलित पद्धति से ही काम चलाते हैं । परिणाम स्वरूप इन क्षेत्र के आदिवासियों को वर्षा के चार महीनों को छोड़कर साल के आठ महीने मजबूरन परिवार के साथ अन्य क्षेत्रों में मजदूरी के लिए स्थानांतर करना पड़ता हैं । यह सिलसिला पिछले कुछ दशकों से निरंतर चलता आ रहा हैं । वर्तमान में यह प्रश्न सर्वग्राही समस्या के रूप में उभर रहा हैं, यह सिर्फ आदिम समाजों तक ही सीमित नहीं रहा हैं, बल्कि ज़्यादातर समाजों में रोजगारी का प्रश्न गंभीर समस्या बन गया हैं ।

(२) ऋणग्रस्तता :

विपत्ति आ पड़ने पर मनुष्य दूसरों से उधार या ब्याज पर रुपए लेता है, उसे कर्ज या ऋण कहते हैं । महत्तम समाजों में उनकी जड़े मजबूत होती हैं । इन विषैले चक्र में फंसे हुए इन्सान को बाहर निकलना आसान नहीं होता, कालानुसार अतिरिक्त आर्थिक बोज और विकट समस्या बन जाती हैं । वर्तमान में आदिवासी समूहों में भी सभ्य समाजों की तरह दो प्रकार के वर्ग दिखाई देते हैं । एक वह है जिनकी स्थिति संतोषप्रद है, जिनके पास अन्न -रुपया का प्रावधान या कुछ छोटे-बड़े व्यापार से जुड़े है और दूसरा वह है जो कंगालियत से गुजर रहा है । एक टंक (वक्त) भोजन के लिए जूझ रहे वह जरूरत मंद लोग ऋणग्रस्त की जाल में फँस जाते हैं । यह चक्र चलानेवाले कुछ हद तक अपने ही जाति के, कुछ बाहर के व्यापारी या एजण्ट होते है, वह लोग गरीबी, मजबूरी का गैरलाभ उठाने में माहिर होते है । आदिवासी समूह सामाजिक, धार्मिक प्रसंग और त्यौंहारों की खुशियाँ अपने-अपने अंदाजों में बांटते आ रहे है, पर आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण उन्हें अनिवार्य संकट से बाहर निकलने का एक ही मार्ग होता है, वह है ऋण । ये लोग अन्न से लेकर शादी-ब्याह के लिए नगद रुपया, आवास निर्माण, बैल -भैसा की ख़रीदारी, बीमारी के इलाज जैसी कई मुसीबतों के लिए कर्जदार बन जाते है । कही कभी मजबूरन अपनी संपति बोलीखत में सस्ते में गँवाने की नौबत का सामना भी करना पड़ता है । समय आने पर ऐसे ब्याजख़ोर अपने मनमाने ढंग से ब्याज वसूलते हैं । करार में दो गुना (डबल) देने का वादा करते हैं । यह सिलसिला पीढ़ियों तक चलता रहता हैं । ये कर्जदार लोग दिन प्रति दिन पायमाल होते जा रहे हैं ।

आदिम जनजाति के लोग प्रकृति के तत्वों में अटूट विश्वास करते हैं, इन तत्वों की प्रसन्नता में ही अपनी सलामती मानते हैं । इसलिए धार्मिक विधिविधान का विज्ञान, मान्यताएँ, शादी-ब्याह और धार्मिक त्यौंहारों के प्रसंगों में होनेवाले खर्च के लिए वे ऋणदार बन जाते हैं । दूसरी और आदिम जाति के लोग गज़ब के व्यसन के बंधे होते हैं, चाहे वह बच्चा हो या महिलाएँ, स्त्री-पुरुष, बुजुर्ग सभी तमाकू, बीड़ी, मिश्रि (तपखीर), शराब जैसी आदतों का बचपन से ही शिकार होते हैं । वे अपना शौक पूरा करने के लिए ऋण का सहारा लेतें हैं । अभ्यास निष्कर्ष से पता चलता है कि ये लोग चाहे वह कितने भी कठिनाई से गुजरते क्यूँ न हो लेकिन ऐसी परेशानियों को महसूस होने नहीं देते । मंद मंद स्मिथ के साथ ' आज की बात आज और कल की बात कल ' देखा जायेगा । मई -जून माह में वापस गाँव आते ही ये लोग उधार लेना शुरू कर देते हैं ।

डांग जिल्ले के प्रमुख कुनबी-कुकणा के अलावा भील और वारली जातियों में ऋण-समस्या विकट रूप में दृष्टिगोचर होती है । भील परिवारों की आर्थिक स्थिति दयनीय होने के कारण आधुनिक महंगी शिक्षा पाने में ज़्यादातर निरसता दिखाई देती हैं । वर्षा के दिनों में ये लोग गाँव में

रहते है, बाकी साल के आठ महीने जहाँ मजदूरी उपलब्ध हो वहाँ परिवार के साथ स्थानांतरण कर जाते हैं । ज़्यादातर गन्ने की कटाई के लिए सूरत, तापी, भरूच, नवसारी, बलसार जिल्ले और इनके तहसील क्षेत्रों में तो, कई परिवार महाराष्ट्र के नजदीकी तहसील क्षेत्रो में फ़सल काटने, फल-फलादी के बागानों और खेतों में मजदूरी के लिए गाँव छोड़कर चले जाते हैं । यहाँ के आदिवासियों के वास्तविक जीवन की यही हकीकत है |

(३) मजदूरी का अभाव :

यह अंतिम सत्य है कि यहाँ के आदिवासियों का जीवन प्रारब्धवादी है । सारा डांग प्रदेश ऊंची पहाड़ियों, घने जंगलों से घिरा हुआ है । आज यह क्षेत्र पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बना है तो दूसरी और स्थानीय आदिवासी लोगों को रोजगारी देने में विफल रहा है । इन क्षेत्रों में पर्याप्त और नियमित रोजगारी पाना बहुत कठिन परिस्थिति है । शुरू से ही यहाँ के आदिवासी रोजगार कि तलाश में भटकते रहे हैं । अपनी आवश्यकताएँ कुछ हद तक कुदरती संपदाओं से पूर्ण करते हैं । भौगोलिक रचनाएँ और विषमता के कारण हरियाली क्रांति, श्वेत क्रांति, गृह उधोग, आधुनिक कारखाने, रेल व्यवहार मतलब यहाँ पूर्णरूप से सड़क व्यवहार का विकास ही बाल्य अवस्था से गुजर रहा हो वहाँ ऊंची उम्मीदे निरर्थक हैं । पिछले कुछ दशकों से आदिम जनआबादी में तेजी से चढ़ाव-उतार होने के कारण धंधा -रोजगार, मजदूरी "कहाँ और कैसे"? का प्रश्न चारों और उठता रहा है । जिल्ले में पाँच नदियाँ बहती है, पर मई-जून माह आने तक यह लोकमाता नदियाँ सूख जाती हैं । वहाँ बड़े पैमाने पर फसलों की अपेक्षाएँ नहीं की जाती । सरकार की ओर से कोई प्रावधान नहीं होने के कारण यहाँ के आदिवासियों की हालत पायमाल होती नजर आती है । बड़े बांध, तालाब की कोई सुविधा न होने के कारण पियत व्यवस्था का अभाव दिखाई देता है । परंपरा से चलती आ रही पुरानी खेत पद्धति, हल -बैल-भैशा और आदर पद्धति, पूर्णत: वर्षा पर निर्भर खेत पद्धति से परिवार का गुजारा करना कठिन हो जाता है ।

इन सब विकट परिस्थितियों से जुझ रहे आदिवासियों के पास आखिर एक ही विकल्प होता है, और वह है विभिन्न क्षेत्रो में जाकर पूरक खेत मजदूरी से परिवार का गुजारा करना । नौकरी न मिलने पर बेकार युवकों बलसार, वापी, दमण, नवसारी, सूरत, अंकलेश्वर, भरूच, पालेज आदि शहरों में औधोगिक मजदूरी से अपना नसीब आजमा रहे हैं और अपना परिवार का पालनपोषण कर रहे हैं ।

(४) उच्च शिक्षा के हेतु :

आधुनिक युग में हो रहे शीघ्र परिवर्तन में उच्च शिक्षा महत्त्वपूर्ण माध्यम माना जाता हैं । शिक्षा की लहर आज हर गाँव-चौराहे तक पहुँच रही है । हालांकि हम जिन क्षेत्र को स्पर्श कर रहे इन क्षेत्र में बसी विभिन्न जातियों, वर्गों में इस लहर का समान मात्रा में पाना बहुत कठिन है । प्राथमिक शिक्षा में जिस तरह का जोश हम देख रहे हैं, वह उच्च शिक्षा तक दिखाई नहीं देता । आधुनिक शिक्षा महंगी-खर्चीली शिक्षा का लेबल बन गई हैं । सन २०११ की जनगणना अनुसार जिल्हे में ६१.७५ प्रतिशत लोग साक्षर बताए गए हैं । वह सामान्य प्राथमिक शिक्षा के अंक ऊँचे बता रहे हैं । उच्च शिक्षा तक पहुँचनेवाले छात्रों की संख्या बहुत कम मात्रा में हैं । कुनबी-कुंकणा और वारली जातियों में उच्चा शिक्षा की लहर प्रभावक दिखाई दे रही है । भीलों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण इस जाति में निरसता पाई गई है । निखालसता से वे प्रत्युत्तर दे रहे हैं या पुछ रहे है कि शिक्षा पाकर क्या करेंगे ? अगर मुश्किलों का सामना करके शिक्षा भी प्राप्त कर ली तो उसके बाद आपके पास नौकरी की कोई गारंन्टी है ? आज सरकारी दफ्तरों में करप्शन के बिना आसानी से नौकरी कहाँ मिलती हैं ? हमारी पीढ़िया खतम होते चली गई लेकिन आजतक हमने एक साथ ढेर सारे रुपया नहीं देखे । यहाँ एक टंक भोजन का इंतजाम करना मुश्किल है ? हम अच्छी तरह जानते है कि शिक्षा पाने के बाद भी हमे बेकार बनना ही है, तो हम शिक्षा की बात करके हमारा समय क्यों बरबाद करे ? कम उम्र से बच्चा काम में हाथ बटौरता रहेगा तो भविष्य में कामचोरी या बेरोजगारी की नौबत नहीं आएगी । जैसे कई सवाल उनके पास मौजूद हैं, जिनका जवाब हम आसानी से नहीं दे पाते । प्राथमिक शिक्षा तक छात्रों की संख्या में बढ़ोतरी का कारण सरकार की ओर से दोपहर का मध्याह्न भोजन की लालच है । दोपहर के बाद वे अक्सर स्कूल न जाकर कहीं ढ़ोर चराने जाते है । जबतक अपने गाँव में रहते है तबतक स्कूल में दाखिल होते है, वर्षा के बाद वे आठ माह परिवार के साथ मजदूरी के लिए बाहर चले जाते हैं । यह घटनाक्रम हर साल चलने से एक तरह बच्चों की उम्र बढ़ती जाती है, तो दूसरी और बीच-बीच में स्कूल छूटने से प्राथमिक शिक्षा से ही वे वंचित हो जाते हैं । इस प्रकार कम शिक्षा पानेवाले बच्चों की संख्या अधिक मात्रा में दिखाई दे रही है ।

जिन परिवारों की स्थिति संतोषप्रद है, उन परिवारों के बच्चे उच्च शिक्षा हेतु शहरों में प्रयाण करते है, या कुछ परिवारों के सद्स्य नौकरी-धंधा हेतु पहले से शहरों में ठहर चुके है इनका सहारा लेकर वे आगे की पढ़ाई का उद्देश्यपूर्ण करते हैं । नजदीकी क्षेत्रों में उच्च शिक्षा हेतु प्रावधान न होने के कारण वे स्थानांतरण करते हैं । खर्चीली-महंगी शिक्षा होने के कारण उच्च शिक्षा पानेवालों की संख्या बहुत कम है, ज़्यादातर दशवी-बारहवी कक्षा तक अपना नसीब आजमा कर छोड़ जाते हैं ।

(५) रोगियों की उपचार हेतु :

आदिवासी लोग प्रारब्धवादी धार्मिक प्रकृति के तत्वों में ज्यादा आस्था रखते है । वे उनकी समस्या, मुसीबतों का समाधान पहले भगत, भूवा, बड़वा के पास ढूंढते है, चाहे वह रोगी-बीमारी, तंदूरस्ती के लिए हो, फ़सल या पशुओं की सुखाकारी - ये सभी समस्याओं का समाधान के लिए इन लोगो का सहारा लेते है ।

वर्तमान में शिक्षा और रुग्ण सेवा सुविधाओ का ज्ञान होने पर गंभीर स्वरूप की बीमारी हेतु वे नज़दीकि सरकारी रुग्णालयों का लाभ कम मात्रा में उठा रहे है । आर्थिक परिस्थिति कमजोर होने के कारण वे ख़ानगी रुग्ण की सेवा, महंगी दवाइयाँ, डाकटरों की ऊंची फी नहीं चुका सकते । प्रसवकाल जैसी पीड़ा का समाधान भी स्त्री-दायण या भगत-भूवाओं के सहारे करवाते हैं । ये स्थितियाँ ही बता रही है कि उनकी परिस्थिति कमजोर है, या ज्ञान का अभाव है, या धार्मिक आस्था में ज्यादा विश्वास करते है । जिल्ले के कुछ गाँवों में फर्जी डाक्टरों का ढेर लगा हुआ है । पैसे -रुपये की कमी के कारण ये लोग ज़्यादातर नजदीकी इनके पास पैदल जाकर अपना इलाज करवाते रहते है, कहीं जंगल की औषधियों से काम चला लेते हैं। ज्यादा गंभीर बीमारियों के कारण जिल्ले में सारी सुविधाएं उपलब्ध न होने पर वे बलसार, सूरत शहरों के सरकारी अस्पतालों में इलाज के लिए जाते है ।

संक्षेप में, इन सारी समस्यों के कारण उनकी परिस्थितियों से, स्थानीय भौगोलिक विषमताओं से उत्पन्न होते हैं । तत्काल उनका परिणाम ढूँढना बहुत कठिन कार्य है | ये जातियाँ अपने जीवन निर्वाह के लिए जीवनभर कठोर परिश्रम करती रहती है, पर परिश्रम के बदले में इनको दो जून की रोटी भी नहीं मिलती । पहाड़ी इलाका, वन-संपदा को ध्यान में रखकर कुछ कुछ जगहों पर लकड़ी कटाई की फैक्टरी (सो मील), आर्युवैदिक केन्द्र, फसल के लिए बांध-तालाब आदि पियत की सुविधाएं, छोटे-बड़े पैमाने पर हुन्नर या गृह उधोग आदि का प्रावधान शासकों की ओर से किया जाए तो स्थानीय रोजगारी का प्रश्न हल हो सकता है, साथ ही स्थानांतरण की समस्या में रोकथाम और शोषकों के चुंगाल से आजादी मिल सकती है तथा यहाँ के आदिवासियों के जीवन स्तर में कुछ सुधार आ सके ।

संदर्भग्रंथ सूचि :

- डॉ॰ दोशी हरीश : नगर समाजशास्त्र, यूनिवर्सिटी ग्रंथ निर्माण बोर्ड, अहमदाबाद
- दवे हर्षिदा : आदिवासी महिलाएं और विकास, यूनिवर्सिटी ग्रंथ निर्माण बोर्ड , अहमदाबाद पहली आवृत्ति -१९९९॰

- पटेल अर्जुन और देसाई किरण : ग्रामीण गुजरात में श्रम-स्थानान्तर, सेन्टर फॉर सोशियल स्टडीझ, सूरत -१९९२.
- ब्रेमन जान : मूडीवादी उत्पादन और ग्राम मजदूरों का परिभ्रमण, सेन्टर फॉर सोशियल स्टडीझ, सूरत -१९८७.
- हार्डिमेन डेविड : जंगल विस्तार में सत्ता के संबंधे, सेन्टर फॉर सोशियल स्टडीझ, सूरत -१९९३.
- आदिवासी संस्कृति और विकास : डांग-आहवा, माहिती आयोग गुजरात राज्य-गांधीनगर
- विकास वाटिका : डांग जिले, माहिती नियामक
- गुजरात की आदिवासी संस्कृति (१९९८) : डांग जिला-माहिती आयोग गुजरात राज्य-गांधीनगर